बिजनौर टाइम्स
हर कदम पर जनता के साथ

चिंगारी

हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष

मुद्रण से डिजिटल तक

30 मई, 2026

दो शताब्दी की यात्रा

खींचों न कमानो को न तलवार निकालो
जब तोप मुकाबिल हो तो अख़बार निकालो

अकबर इलाहाबादी ने जिस दौर में यह शेर लिखा था, तब देश आज़ादी के लिये छटपटा रहा था और दास्तां की ज़ंजीरों को काटने के लिये पत्रकार भी क़लम के ज़रिये अंग्रेजों के ख़िलाफ़ जंग में कूद पड़े थे। अकबर इलाहाबादी का यह शेर अख़बार के महत्व को रेखांकित करता है। देश की आज़ादी के आंदोलन में अनेक पत्रकारों ने भी अंग्रेजी शासन की यातनाएं सहन कीं और अपने प्राणों का बलिदान भी किया। उस समय के लगभग हर बड़े स्वतंत्रता सेनानी ने अख़बार निकालकर देशवासियों को अंग्रेजों के विरुद्ध लामबंद किया था। लंबे संघर्ष और

बलिदानों के बाद देश आज़ाद हुआ। तब अख़बारों और पत्रकारों ने देश के नवनिर्माण में अपना योगदान शुरू किया। 80 के दशक तक भारत की पत्रकारिता लगभग मिशनरी थी। आपातकाल के दौरान पत्रकारों और अख़बारों ने लोकतंत्र की बहाली के लिये संघर्ष किया और जेल यात्राएं कीं। 90 का दशक आते-आते देश में उदारीकरण की नीतियां लागू हुईं, तब पत्रकारिता का भी रूप तेजी से बदलना शुरू हुआ और देखते ही देखते यह उद्योग और व्यवसाय में बदल गई। सन 2000 के बाद जब इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का उदय हुआ, तब पत्रकारिता का रूप और स्वरूप पूरी तरह बदल गया। आज पत्रकारिता अब तक के सबसे गंभीर संक्रमण के दौर से गुज़र रही है। सबसे बड़ा संकट विश्वसनीयता का है। पत्रकारिता का नाम भी बदलकर 'मीडिया' हो गया और यह मीडिया काफी हद तक एजेंडा और प्रोपेगेंडे का माध्यम बन गई है। पत्रकारिता, जो सामाजिक एवं मानवीय सेवा के उच्च आदर्शों को लेकर आगे आई थी, वह परिस्थितियों से टकराते और संघर्ष व समझौते करते हुए आज हमारे इस दौर में ठोस व्यवसायिक आधारों पर स्थापित हो गई है। समय कठिन है, लेकिन जब तक प्रकाश की एक किरण भी मौजूद है, तब तक अंधकार नहीं कहा जा सकता। हिंदी पत्रकारिता की 200 वर्ष की यात्रा के उपलक्ष्य में 'बिजनौर टाइम्स' व 'चिंगारी' की ओर से एक छोटा-सा उपहार इस परिशिष्ट के रूप में आपके हाथों में है।

चंद्रमणि रघुवंशी

मुद्रण से डिजिटल तक साहित्यिक पत्रकारिता की यात्रा

-प्रो. अरुण देव

पुराने संचार माध्यमों में से अधिकांश हमें औपनिवेशिक दौर में मिले-गकिताब, अख़बार, तार, रेडियो आदि। इनका प्रयोग हमने उपनिवेशवाद के विरुद्ध अवश्य किया, पर इन पर पर्याप्त पाबंदियां थीं। हमारी अभिव्यक्ति अबाध नहीं थी। साथ ही ये सभी एकतरफ़ा माध्यम थे; अर्थात् आप केवल पाठक, श्रोता या दर्शक भर थे।

डिजिटल माध्यम हमें आज़ाद भारत में मिला। हालांकि इसका विकास यूरोप में सैन्य आवश्यकताओं और युद्धों को ध्यान में रखकर हुआ था, पर शीघ्र ही इसका स्वतंत्र स्वरूप विकसित हो गया और शेष विश्व की तरह यह भारत में भी आया। यह अभिव्यक्ति की अपेक्षाकृत अधिक अबाध स्वतंत्रता देता है। यह एकतरफ़ा नहीं, बल्कि बहुमुखी माध्यम है।

पारम्परिक संचार माध्यम, जिसमें मुद्रित सामग्री भी शामिल है, का भारत में आगमन और विकास उपनिवेश काल में हुआ। इसके साथ ही साम्राज्यवाद-विरोधी और राष्ट्रवादी चेतना का भी विकास हुआ। इसके विपरीत, डिजिटल माध्यम में उत्तर-साम्राज्यवाद या पूंजीवादी साम्राज्यवाद-विरोधी चेतना न केवल क्षीण दिखाई देती है, बल्कि कई बार उसकी समझ भी अनुपस्थित लगती है।

मुद्रित सामग्री की पत्रकारिता और साहित्य किसी 'काल्पनिक समुदाय' को सम्बोधित करते हैं और उसी के माध्यम से राष्ट्र का निर्माण भी होता है। पर डिजिटल माध्यम का समुदाय, यद्यपि आभासी कहा जाता है, पूरी तरह काल्पनिक नहीं है; उसकी एक निश्चित और प्रत्यक्ष पहचान है। मुद्रित माध्यम चूंकि आधुनिक विश्व में नेशन-स्टेट के उदय और अस्तित्व से जुड़ा हुआ है, इसलिए उसका एक सीमित दायरा है। वह मुख्यत: एक देश और उससे सम्बद्ध लोगों को सम्बोधित करता है। इसके विपरीत, डिजिटल माध्यम भूमंडलीकरण के दौर की घटना है; इसलिए इसमें राष्ट्र-राज्य की सीमाएं अपेक्षाकृत कम प्रभावी हैं। भाषा की सीमाएं अवश्य हैं, पर भाषाएं स्वयं किसी एक देश में महदूद नहीं रहतीं। मुद्रित माध्यम की गति और पहुंच की अपनी सीमाएं हैं, जबकि डिजिटल माध्यम इन सीमाओं को बहुत हद तक पार कर चुका है।

भारत जैसे समाज में, जहाँ स्त्रियों और सामाजिक रूप से वंचित वर्गों की अभिव्यक्ति पर अनेक प्रकार की बंदिशें थीं, डिजिटल माध्यम ने उन्हें अपनी बात रखने का अपेक्षाकृत सुरक्षित और सशक्त मंच दिया है। वे अनेक रूपों में अपने को अभिव्यक्त कर रही हैं। सोशल मीडिया, विशेषकर फ़ेसबुक पर कवयित्रियों की बढ़ती उपस्थिति को इसी संदर्भ में देखा जाना चाहिए। मुद्रित माध्यम के दौर में लेखकों के आपसी मिलन-स्थल वास्तविक होते थे। कॉफ़ी हाउसों में बहसों के लंबे दौर चला करते थे, हालाँकि उनकी पहुंच और प्रभाव का दायरा सीमित रहता था। आज डिजिटल माध्यम में बहसें बहुत अधिक लोगों तक पहुँचती हैं, फिर भी मानवीय उपस्थिति का कोई विकल्प नहीं हो सकता। यह भी ध्यान देने योग्य है कि बीसवीं शताब्दी के अंत तक आते-आते वे सार्वजनिक बौद्धिक स्थल भी सिमटने लगे थे और 'प्याले में तूफ़ान' जैसी बहसों की ऊष्मा भी कम हो चुकी थी। डिजिटल माध्यम पठनीयता के साथ-साथ दर्शनीयता पर भी ज़ोर देता है। मुद्रित माध्यम में शब्द केंद्रीय भूमिका में थे और चित्र सहयोगी तत्व के रूप में प्रयुक्त होते थे। डिजिटल माध्यम में कई बार विचार से अधिक दृश्यता और देखने की संस्कृति पर बल दिखाई देता है, जिसके पीछे बाज़ार की भी बड़ी भूमिका है। किसी चीज़ को कितनी बार 'लाइक' किया गया, इससे उसकी सामाजिक उपस्थिति और महत्व प्रभावित होता है। यह 'पसंद' अक्सर हमारे सौन्दर्य-बोध से भी जुड़ी होती है। यदि आपकी कोई टिप्पणी किसी चित्र या पेंटिंग के साथ आती है, तो उसके अधिक पसंद किए जाने की संभावना बढ़ जाती है। पहले साहित्यकारों के बहुत कम चित्र उपलब्ध होते थे- अक्सर श्वेत-श्याम में बचपन, युवावस्था या किसी सम्मेलन के। आज चित्रों की मानो बाढ़ आ गई है।

डिजिटल माध्यम ने भाषा और शिल्प को भी बदला है। चूंकि यह अत्यंत गतिशील और चंचल माध्यम है, इसलिए यहाँ पुराने ढंग की लंबी, उबाऊ भूमिकाओं और लद्धड़ गद्य के लिए बहुत जगह नहीं है। यहाँ तेज़, विषय-केंद्रित और चुस्त गद्य की आवश्यकता होती है, जो पाठक को अंत तक पढ़ने के लिए विवश कर दे। मौखिक से मुद्रित और फिर डिजिटल तक की यह एक लम्बी यात्रा है। ज़ाहिर है, जिस तरह हम मुद्रित से पूरी तरह मौखिक की ओर नहीं लौट सकते, उसी तरह डिजिटल को छोड़कर केवल मुद्रित पर निर्भर रहना भी अब संभव नहीं है। हाँ, यह ज़रूर है कि मुद्रित और डिजिटल प्रकाशन साथ-साथ चलें और एक-दूसरे का सहयोग करें। डिजिटल माध्यम ने यदि पाठकों की संख्या में वृद्धि की है, तो उनमें से कुछ पाठक प्रिंट की ओर भी जाएंगे।

वेब पर पत्रिका निकालना सुविधाजनक और अपेक्षाकृत कम खर्चीला है। यह त्वरित है और कई बार अधिक आकर्षक भी। इसमें पृष्ठों या चित्रों की कोई सीमा नहीं होती। प्रूफ़ या तथ्यों की त्रुटियों को बाद में भी सुधारा जा सकता है, जो किसी वरदान से कम नहीं। वेब पत्रिकाएं कहीं से भी- जहां इंटरनेट की सुविधा उपलब्ध हो- प्रकाशित की जा सकती हैं और जहां कम्प्यूटर या स्मार्टफ़ोन है, वहां पढ़ी भी जा सकती हैं। विशेषकर साहित्यिक पत्रिकाओं की अनुपलब्धता की समस्या को इस माध्यम ने बहुत हद तक समाप्त कर दिया है। पत्रिकाओं की जो भी भूमिका होती है, उन्हें वेब पत्रिकाएं भी बख़ूबी निभा रही हैं। यही कारण है कि लगभग सभी प्रिंट पत्रिकाओं के वेब संस्करण भी साथ-साथ प्रकाशित हो रहे हैं। प्रिंट जगत का भी अपना एक सत्ता-केंद्र बन गया था और उसकी अपनी जातीय तथा जेंडर-राजनीति थी। चूंकि उस पर कुछ घरानों और संस्थाओं का वर्चस्व था, जो महानगरों से संचालित होते थे, इसलिए 'उपेक्षित' की अपेक्षित आवाज़ वहां पर्याप्त रूप से उपस्थित नहीं थी। दूर-दराज़ और हाशिये पर रहने वालों के लिए वहां पहुंचना कठिन था और वे पत्रिकाएं भी वहां तक नहीं पहुंच पाती थीं। इसके विपरीत, वेब पर स्त्रियां, दलित, अल्पसंख्यक, ग्रामीण और कस्बाई समाज- सभी लगभग समान सुविधाओं का उपयोग करते हैं। एक तरह से यह अभिव्यक्ति की उपलब्धता का जनतंत्रीकरण है।

शेष पृष्ठ 7 पर

उदन्त मार्तण्ड
बिजनौर टाइम्स
हर कदम पर जनता के साथ
चिंगारी
हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष
मुद्रण से डिजिटल तक
30 मई, 2026

हिन्दी पत्रकारिता : कल, आज और कल

**हमारे शहर की आंखों ने मंजर कुछ और देखा था
मगर अखबार की ये सुर्खियां कुछ और कहती हैं...**

-प्रोफेसर अमित सिंह
आर.एस.एम (पीजी)
कालेज, धामपुर

आज समूचे भारत में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत की एक टिप्पणी चर्चा में है। उन्होंने एक जनहित याचिका को खारिज करते हुए बेरोजगार युवकों की तुलना तिलचट्टी और परजीवी से की थी। हिन्दी के पत्रकारिता के विभिन्न प्लेटफॉर्म में इसका विरोध इतना तीखा था कि मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत को सफाई देनी पड़ी। आज यह आजाद भारत की दुखद दस्तान है। कल्पना कीजिए कि आज से दो सौ साल पहले की स्थिति क्या रही होगी ?

आजादी से पहले: आज से दो सौ साल पहले वर्ष 1826 में पंडित जुगर किशोर शुक्ल के द्वारा 'उदण्ड मार्तण्ड' अखबार की शुरूआत की गई। यह गुलामी का दौर था। हम अंग्रेजों के गुलाम थे। अंग्रेजों के साम्राज्यवाद की कहानी दिल दहलाने वाली थी। एशिया और अफ्रीका के एक तिहाई हिस्से पर अंग्रेजी हुकूमत का दबदबा था। अंग्रेज क्रूर और हिंसक थे। शक्ति सम्पन्न थे, हथियारों और तकनीक से लैस तो वे थे ही। उनकी शक्ति के बारे में कहा जाता था- ब्रिटिश साम्राज्य में कभी सूर्यास्त नहीं होता है। भारत न केवल गुलाम था बल्कि भारतीयों के मन और उनके सामाजिक विवेक पर भी अंग्रेजी हुकूमत का कब्जा था। ऐसी विषम परिस्थिति में हिंदी पत्रकारता ने समाचार पत्र का उपयोग कई स्तर पर किया। पहला, अखबार के माध्यम से ब्रिटिश सरकार की गलत नीति, उनकी क्रूरता और हिंसा का विरोध किया जाता था। दूसरा, हिन्दी अखबारों के माध्यम से पढ़ा लिखा एक सजग मध्यम वर्ग निर्मित हुआ, जो आगे चलकर स्वतंत्रता आंढोलन का अगुआ बना। तीसरा, हिंदी अखबारों के माध्यम से जनता को राजनीतिक रूप से जगरूक करने का काम किया। चौथा, उस दौर के प्रखर पत्रकारों और लेखकों ने अपने कलम की धार से आम जनता की आवाज को अपने शब्द से अंग्रेजों तक पहुंचाया। पांचवां, इससे उस दौर की राजनीति का समाज से संवाद आरम्भ हुआ। आज हमें यह साधारण सी बात लगेगी, लेकिन उस दौर में यह खासा कठिन था। एक तरफ अंगरेजों का दमन, दूसरी तरफ समाचार पत्रों के लिये पूंजी, धन, साधन और मुद्रण-संस्कृति का अभाव। फिर भी हिन्दी पत्रकारिता ने ब्रिटिश विरोध, राजनीतिक जागरूकता फैलाने, जनमत निर्मित करने और सतत प्रयास को जारी रखा। इसके ढेरों उदाहरण हो सकते हैं, लेकिन कुछेक उदाहरण पर्याप्त होंगे। वर्ष 1913 में कानपुर से आरम्भ हुआ समाचार पत्र 'प्रताप', जिसके संपादक गणेश शंकर विद्यार्थी थे। वह उन दिनों क्रांतिकारी विचारों का प्रमुख मुख पत्र था। कर्मवीर माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा संपादित पत्र 'राष्ट्रीय चेतना' और देशभक्ति जगाने का प्रमुख माध्यम था। 'नवजीवन' महात्मा गांधी द्वारा शुरू किया गया समाचार पत्र था। हिन्दी पत्रकारिता के इस सामूहिक प्रयास का प्रभाव सुखद था, देश की स्वतंत्रता के लिए।

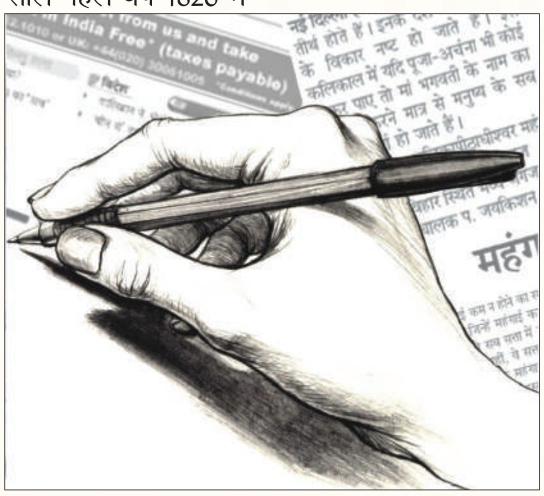

आजादी के बाद: भारत जब आजाद हुआ तो हमारे साथ देश के विभाजन के साथ-साथ हमें भुखमरी, चरमराए लघु उद्योग, अशिक्षा, मृत्यु दर जैसी समस्याओं से भी दो चार होना पड़ा। इस परिस्थिति में हिन्दी पत्रकारिता का काम भी स्वत: बदल गया। अब हिन्दी पत्रकारिता का मुख्य काम राष्ट्रनिर्माण था। इस दौर में हिन्दी पत्रकारिता का उद्देश्य राष्ट्र-निर्माण था यानि एक विकसित होते देश में जनता की अपेक्षाओं को सरकार के प्रयासों से जोड़कर एक बारीक-संतुलन बनाया। करीब-करीब यह दौर वर्ष 1970 तक चला।

आपातकाल और जागरूक हिंदी पत्रकारिता : 1975 के आपातकाल से पहले यह कभी भी सोचा नहीं गया था कि आजादी के केवल 23 वर्षों के बाद ही सता निरंकुश हो जाएगी और अपनी ही जनता की आवाज को दबाने का काम करेगी, बहरहाल ऐसा हुआ। इस दौर में सरकार ने सेंशर शिप लागू कर दी। पत्रकारों को प्रताड़ित किया गया। अखबारों को धमकाने का काम किया गया। लेकिन सत्ता को झुकना पड़ा। स्वतंत्र भारत में हिंदी पत्रकारिता की यह पहली बड़ी जीत थी। इसके बाद निर्णायक परिवर्तन आया- वर्ष 1991 में भूमण्डलीकरण का दौर वर्ष 1991 में आर्थिक सुधारों के आरम्भ से भारत समूचे विश्व के बाजार-व्यवस्था से जुड़ गया। इस दौर में पूंजी के आगमन से तकनीक की उपलब्धता, बाजार का ग्लैमर और व्यवसाय से समूचे हिंदी पत्रकारिता का किरदार व्यक्तित्व और चरित्र बदल गया। पत्रकारिता अब धंधा बन गया। बड़े कॉरपोरेट घरानों का आगमन हुआ। आजादी के दिनों में हिंदी पत्रकारिता राष्ट्र प्रेम, आजादी के बाद के वर्षों में यह राष्ट्र निर्माण, आपातकाल में प्रतिकार का आंदोलन लेकिन अब यह मुनाफा कमाने का शर्तिया नुस्खा बन गया। निश्चित ही इसके दुष्परिणाम हुए लेकिन साथ ही साथ इसके कई सकारात्मक परिणाम भी देखने को मिले। मसलन विशेषकर हिंदी पत्रकारिता जन-आंदोलन का माध्यम बना, यह सत्ता विरोध की सार्थक रिपोर्टिंग का जरिया बना, यह नगर शहर से आगे बढ़कर गांव और कस्बों तक पहुंचा। इससे हमारे लोकतंत्र का क्षैतिज विस्तार हुआ। यह बड़ा तबका इस हिंदी पत्रकारिता से जुड़ गया। यही नहीं समाचार पत्र अब स्वास्थ्य, जीवन शैली, साहित्य और संस्कृति जैसे विषयों से जुड़ कर हमारे जीवन का एक अभिन्न हिस्सा बन गया।

आज की सोशल मीडिया तकनीक से विकास, इंटरनेट और स्मार्ट फोन की उपलब्धता से अब हिंदी पत्रकारिता का स्वरूप और ज्यादा लोकतांत्रिक हो गया है। मोबाइल की सहायता से भी पत्रकारिता का काम जारी है। रील्स, मीम, इंटरव्यू, कार्टून जैसे नए माध्यमों का प्रयोग शुरू हो गया है। इसके खतरे भी सामने हैं। सत्ता इसका दुरुपयोग करने लगी है, वो भी झूठ परोस कर, लेकिन सरकारी विज्ञापनों का दबाव जो हिंदी पत्रकारिता में सत्ता को सशक्त बनाया करता था, अब वह सोशल मीडिया के माध्यम से बड़ी बेबाकी से अपना काम कर रहा है। कई नामचीन पत्रकार टेलीविजन की दुनिया को छोड़कर अपना यूट्यूब चैनल चला रहे हैं। इसमें कुछ में गहराई, वैज्ञानिकता और वस्तुनिष्ठता- तीनों ही हैं।

इम्तिहान बाकी है : यद्यपि हिंदी पत्रकारिता का दो सौ साल का इतिहास अभूतपूर्व, ऐतिहासिक और रोमांचकारी रहा है। इसमें समय, काल और परिस्थिति के अनुसार संघर्ष करने का जज्बा और आवश्यकता के अनुसार अपने को बदलने का आत्मविश्वास और हुनर भी है। पर आज चुनौतियां भी हैं। इसकी साख खतरे में है। पूंजी का संकट है। सत्ता का अति अहंकार और आक्रमण सामने है। अखबारों में कॉरपोरेटीकरण से बड़े अखबार खूब फल-फूल रहे हैं। छोटे और मंझोले अखबार संकट में हैं। लोकतांत्रिक सजगता बढ़ रही है, लेकिन इसकी हिंदी पत्रकारिता का चरित्र संकट भी सामने दिखाई दे रहा है। उपसंहार दुखद है-

**'कोठी बना ली आपने किरदार बेचकर
कैसे मैं घर बनाऊंगा अखबार बेच कर।'**

उदन्तमार्तण्ड
बिजनौर टाइम्स
हर कदम पर जनता के साथ
चिंगारी
हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष
मुद्रण से डिजिटल तक
आज की ताज़ा ख़बर
30 मई, 2026

पक्षपातपूर्ण मीडिया : भारत के लोकतंत्र के समक्ष एक ख़तरा

-सूर्यमणि रघुवंशी
संपादक चिंगारी (सांध्य दैनिक)
बिजनौर, उ.प्र.

भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। अपनी विविधता, बहुलता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के लिये जाना जाता है। संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (क) के तहत प्रेस की स्वतंत्रता लोकतंत्र की रीढ़ है, जो सरकार को जवाबदेह बनाती है, जनता को सूचित करती है और सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनती है। इसीलिए पत्रकारिता, जिसे अब मीडिया कहा जाने लगा है, लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ माना गया है। दरअसल, पत्रकारिता यानि मीडिया का काम ही लोगों की समस्याओं और जनता की आवाज को शासन तक पहुंचाना है। जब मीडिया शासक वर्ग से लोगों के हित में सच्चे और कठोर प्रश्न, निर्भीक एवं निडर होकर पूछता रहता है, तब-तब शासकों पर जनहित के फैसले लेने का दवाब बना रहता है। लेकिन पिछले एक दशक में मीडिया अपने उद्देश्य से भटक गया है।

मीडिया का निष्पक्ष और तटस्थ होना स्वस्थ लोकतंत्र के लिए परम आवश्यक है, लेकिन आज हम मीडिया को देखते हैं तो भारतीय मीडिया के पक्षपात की प्रवृत्ति इतनी प्रबल हो गयी है कि यह लोकतंत्र के मूल सिद्धांतों को ही चुनौती दे रही है। पक्षपातपूर्ण मीडिया से तात्पर्य ऐसे मीडिया से है जो तथ्यों को निष्पक्ष रूप से प्रस्तुत करने के बजाय राजनीतिक, धार्मिक या आर्थिक हितों के आधार पर विकृत करते हैं। यह न केवल जनता को गुमराह करता है, बल्कि सम्प्रदायिक ध्रुवीकरण, हिंसा को बढ़ावा तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं की विश्वसनीयता को कमजोर करता है। विश्व प्रेस सूचकांक अर्थात World Press Freedom Index में भारत की रैंकिंग बहुत नीचे पहुंच गयी है, जो मीडिया की गुणवत्ता और उसके पक्षपातपूर्ण रवैये को दर्शाने के लिए काफी है। पक्षपातपूर्ण मीडिया न केवल लोकतंत्र में चुनावों को प्रभावित करता है, बल्कि समाज की एकता को भी खतरे में डालता है।

भारतीय मीडिया का इतिहास स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ा है। 19वीं सदी में राजाराम मोहन राय के 'संवाद कौमुदी' और बाल गंगाधर तिलक के 'केसरी' जैसे समाचार पत्रों ने ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ आवाज उठाई थी। गणेश शंकर विद्यार्थी ने अपनी शहादत दी थी। तब समाचार-पत्र बहुत कम थे और इलेक्ट्रोनिक मीडिया व सोशल मीडिया का उदय भी नहीं हुआ था, फिर भी भारतीय प्रेस की भूमिका इतनी सशक्त थी कि उसने सभी भारतवासियों को एक मंच पर लाकर खड़ा कर दिया था और जब सारा देश एक हो जाए तो फिर कोई सत्ता उसका मुकाबला नहीं कर सकती। उस समय के मीडिया ने जनता की आवाज बनकर अंग्रेजी शासन की नींव हिला दी थी।

स्वतंत्रता के बाद प्रेस यानि मीडिया को फोर्थ एस्टेट यानि लोकतंत्र के चौथे स्तम्भ का दर्जा मिला, जिसने सरकार की निगरानी बखूबी की। 1975 के आपातकाल के दौरान मीडिया पर सेंसरशिप लगी, लेकिन इसके बाद यह और मजबूत हुआ। 1990 के दशक में उदारीकरण के साथ न्यूज चैनलों का उदय हुआ। दूरदर्शन के साथ-साथ और भी अनेक इलेक्ट्रोनिक चैनल आ गए और मीडिया के रूप-स्वरूप में परिवर्तन आने लगा।

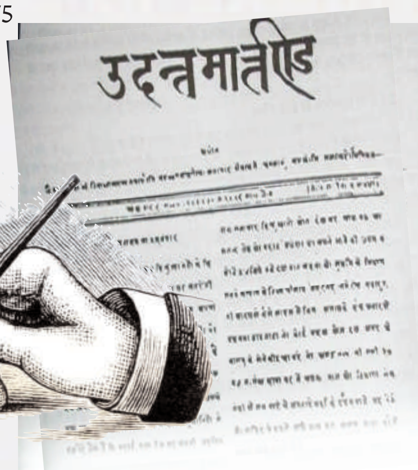

आज 21वीं सदी में सोशल मीडिया का बोलबाला है। इस डिजिटल युग में सोशल मीडिया के उदय ने फेक न्यूज और प्रोपेगेंडा को बढ़ावा दिया है। आजकल 'गोदी मीडिया' शब्द बहुत प्रचलित है, जो इंगित करता है उस मीडिया को, जो सत्ता की गोद में बैठा हुआ है और जो जिसकी गोद में बैठा हुआ है, वह उससे प्रश्न करने की हिमाकत कैसे कर सकता है? यह पक्षपातपूर्ण मीडिया केवल राजनीतिक नहीं, बल्कि धार्मिक और जातीय भी है, जो धर्म विशेष, जाति विशेष के पक्ष में बात करता है।

स्वस्थ लोकतंत्र के लिए निष्पक्ष मीडिया की आवश्यकता होती है लेकिन आज के मीडिया को देखकर निराशा होती है। किसी कला, पेशे अथवा सेवा कार्य का व्यवसायीकरण हो जाना कोई आपत्तिजनक बात नहीं है। कोई भी सेवा कार्य हो, उससे जुड़े लोग, उसी तरह के हाड़-मांस के प्राणी होते हैं, जैसे दूसरे व्यवसाय में काम करने वाले लोग। उनकी भी आवश्यकताएं होती हैं, जैसी दूसरों की। लेकिन देखना यह होता है कि व्यवसाय की सीमाएं क्या हों? क्या व्यवसाय को नैतिक मूल्यों को नजरअंदाज कर निकल जाना चाहिए, और क्या लक्ष्य मानवता नहीं, पैसा और केवल पैसा बन जाना चाहिए? नहीं। यह किसी भी पेशे, किसी भी कार्य के लिए उचित नहीं ठहराया जा सकता। व्यवसाय भी मूल्यों पर आधारित हो तभी स्वीकार्य है। शर्बत की परत चढ़ाकर विष बेचने की अनुमति नहीं दी जा सकती, लेकिन आज जब हम अपने चारों ओर देखते हैं तो ऐसा लगता है जैसे सारी दुनिया ने बाजार का रूप ले लिया है और जिसमें सब कुछ बिक रहा है। मुझे यह कहने में जरा भी गुरेज नहीं है कि मीडिया भी उसमें से एक बन गया है, और जो चीज बिकाऊ होती है, उसकी न कोई नीति होती है, न ही सिद्धांत। फिर न उसे समाज से कुछ लेना होता है, और न ही मानवता से।

मीडिया और राजनीति दोनों ऐसे क्षेत्र हैं, जो सीधे तौर पर सार्वजनिक जीवन से जुड़े हैं। मीडिया में तो विशेष रूप से ऐसा शक्ति है, तो जनसाधारण को व्यापक रूप से प्रभावित करने की क्षमता रखती है। मीडिया और लोकतांत्रिक व्यवस्था का चोली-दामन का साथ है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि मीडिया सत्तापक्ष को भी प्रभावित कर सकती है। प्रत्येक मीडियाकर्मी अपनी इस शक्ति से भली-भांति परिचित होता है। अब यह उस पर निर्भर करता है कि वह अपनी शक्ति का प्रयोग किस प्रकार करता है। शक्ति कई बार अविवेकशील तत्वों को पथभ्रष्ट अथवा असंतुलित भी कर देती है। आज हम सत्ता का दुरुपयोग होते हुए आयेदिन देखते हैं और कर कुछ नहीं पाते। आश्चर्य तो तब होता है जब मीडिया उसको सच साबित करने में अपनी जी-जान लगा देता है। कई चैनल और अखबार बिना सवाल किये किसी राजनीतिक दल, विशेष कर सरकार का समर्थन करते हैं, जबकि दूसरों को नकारात्मक रूप से चित्रित करते हैं।

आज के दौर में मीडिया की बात करें तो ज्यादातर मीडियाकर्मी पत्रकार कम, दल विशेष के प्रवक्ता ज्यादा लगते हैं। वास्तव में देखा जाये तो मीडिया का प्रमुख कार्य सत्य को उजागर करने के साथ-साथ लोकतंत्र को आगे बढ़ाना है, परंतु आज का मीडिया विशुद्ध प्रोफेशन बनकर रह गया है, और पेशेवरों का काम ही होता है किसी भी रूप में अपने प्रोफेशन को आगे बढ़ाना। आज आप समाचार चैनलों पर होती अलग-अलग दलों के प्रवक्ताओं की बहस सुनो तो उसमें प्रोग्राम होस्ट कर रहे पत्रकार यानि एंकर को तमाम खराब शब्दों से अलंकृत करते लोग दिखाई दे जायेंगे। एंकर भी अपने फर्ज और मर्यादा को भूलकर हर तरह की लांछना सहनकर गलत या सही का अंतर किये बिना अपने व्यक्तिगत स्वार्थसिद्धि के लिये किसी राजनीतिक दल के हाथों की कठपुतली बना रहता है।

आज के मीडिया पर पूंजीपति और राजनेता किस तरह हावी हैं, यह किसी से छिपा नहीं है। डिजिटल युग में तेजी से बदलते मीडिया परिदृश्य से उत्पन्न चुनौतियों से सफलतापूर्वक निपटने के लिये पत्रकारों को भी अपनी रिपोर्टिंग में सटीकता, निष्पक्षता और उत्तरदायित्व के मानकों को बनाये रखने की आवश्यकता है।

यह भी तथ्य है कि मेनस्ट्रीम मीडिया की पक्षपातपूर्ण या एकपक्षीय नीति के कारण ही सोशल मीडिया पर कई समाचार चैनलों का उदय हुआ। मेनस्ट्रीम मीडिया पर से लोगों का विश्वास आज कम होता जा रहा है क्योंकि उनका व्यवहार एक उपासक का हो गया है। बात चाहे किसान आंदोलन की हो, मणिपुर की हो, पहलवान बेटियों का मुद्दा हो या फिर नोटबंदी का, फायदा गिनाते हुए 2000 के नोट में चिप डालने का हो या अन्य ऐसे अनेक मामले हैं, जहां मेनस्ट्रीम मीडिया पूरी तरह भ्रम फैलाता नजर आया। जबकि मीडिया को जनता की आवाज कहा जाता है। मीडिया जब अपने धर्म का पालन नहीं करता तो उसका प्रभाव सिर्फ देश पर नहीं, पूरे विश्व पर पड़ता है। भारत के लोकतंत्र की छवि धूमिल करने में मीडिया भी कम दोषी नहीं है।

आज जब हम हिन्दी पत्रकारिता के दो शतक पूर्ण होने का जश्न मना रहे हैं, तब हमें अपने अतीत में भी झांकना होगा और उन मूल्यों व परंपराओं पर मनन करना होगा, जिन्हें हम किसी लोभ, स्वार्थ या दबाव में पीछे छोड़ आये हैं। पक्षपातपूर्ण मीडिया भारत के लोकतंत्र के लिये एक गंभीर खतरा है, जो समाज को विभाजित करता है, सरकार को अनियंत्रित बनाता है और जनता को गुमराह करता है। लेकिन ऐसा भी नहीं कि भारत का सारा मीडिया ही अपने कर्तव्य से विमुख हो गया है। आज भी अनेक पत्रकार/मीडियाकर्मी अपने कर्तव्य का निर्वाह भली-भांति कर रहे हैं और जब तक प्रकाश की एक किरण भी नजर आती रहे, अंधकार नहीं कहा सकता।

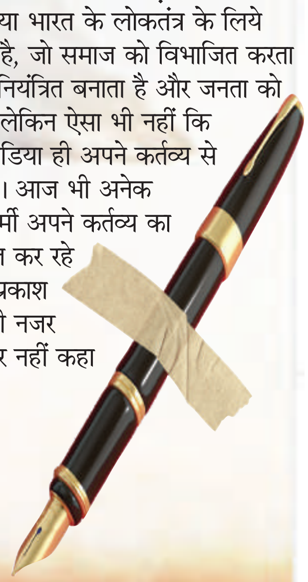

उदन्त मार्त्तण्ड
बिजनौर टाइम्स
हर कदम पर जनता के साथ
चिंगारी
हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष
मुद्रण से डिजिटल तक
30 मई, 2026

हिंदी पत्रकारिता : जिनको सम्मानित किया जाना चाहिये उनको प्रताड़ित किया जा रहा है...

-इक़बाल हिंदुस्तानी

उदन्त मार्तंड अखबार के संस्थापक और संपादक पंडित जुगल किशोर शुक्ल थे जो कानपुर उत्तर प्रदेश के मूल निवासी थे। वे कलकत्ता में वकील के रूप में कार्यरत थे और सदर दीवानी अदालत में प्रक्रिया पाठक और बाद में प्लीडर के रूप में काम करने लगे थे। पत्रकारिता का विचार मन में आने के बाद उसको कार्यांवित करने के लिये 16 फरवरी 1826 को उन्हेंने अपने करीबी मुन्नू ठाकुर के साथ हिंदी अखबार निकालने का सरकार से लाइसेंस प्राप्त किया। उस समय कलकत्ता में अंग्रेजी, बंगाली और फारसी के अखबार पहले से ही पब्लिश हो रहे थे, लेकिन हिंदी में कोई भी समाचार पत्र नहीं था। शुक्ला जी को यह बात बहुत चुभ रही थी उन्हेंने इस कमी को दिल से महसूस किया और हिंदी भाषी जनता के लिए अपना पहला हिंदी अख़बार उदंत मार्तंड शुरू किया। किसी भी अख़बार को छापने का उद्देश्य और सामग्री ज़रूरी होती है। जुगल किशोर जी का उद्देश्य हिंदी भाषा को समाचार पत्र का माध्यम बनाना था। आम जनता खासकर हिंदी भाषी क्षेत्रों तक समाचार पहुंचाना भी उनका मकसद था। इसमें स्थानीय राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय समाचार, ज्ञानवर्धन मनोरंजन समाज सुधार सामाजिक कुरीतियों के विरोध में टिप्पणियां, नैतिक व आध्यात्मिक शिक्षा और जनता में अपने अधिकारों के लिये जागरूकता संबंधी लेख बहुतायत में प्रकाशित होते थे। इस छोटे से अखबार ने उस समय की महती आवश्यकता समझे जानी वाली हिंदी को सार्वजनिक बहस और सूचना के माध्यम के रूप में समाज में स्थापित करने की ठोस नींव रखने का विशाल काम अंजाम दिया।

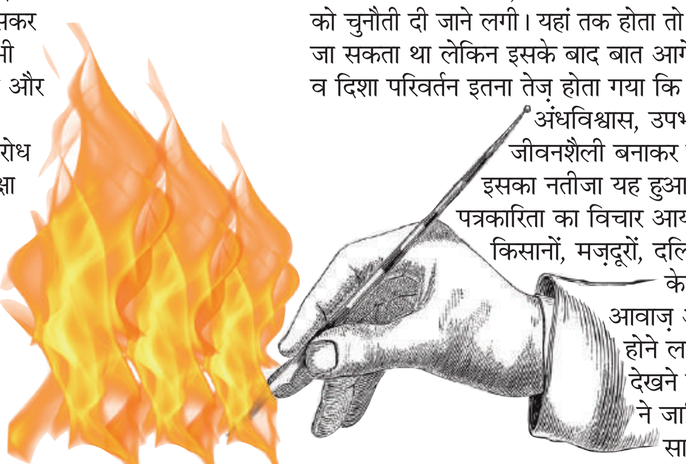

इसके सामने अपना अस्तित्व बचाये रखने से लेकर आर्थिक चुनौतियां और बंदी का खतरा भी मंडराता रहता था। एक दिन यह आशंका सही साबित हो गयी जबकि अखबार केवल लगभग डेढ़ साल (कुल 79 अंक) तक ही चला। 4 दिसंबर 1827 को इसका अंतिम अंक प्रकाशित हुआ। इसके लगातार प्रकाशन नहीं होने की पीछे मुख्य कारण उच्च डाक शुल्क बड़ी वजह बनी। तमाम प्रयासों के बाद भी सरकार से अखबार को मिशनरी पत्रों जैसी छूट नहीं मिली। सीमित पाठक संख्या इसके लिये बड़ी बाधा बनी। हिंदी पढ़ने वाले शिक्षित लोग कम थे और अखबार का केंद्र कलकत्ता में था, जबकि हिंदी क्षेत्र उत्तर भारत में था। आर्थिक कठिनाइयां आईं और बढ़ती चली गयीं। कोई सरकारी सहायता या बड़ा निजी प्रायोजक सहायता को नहीं मिला। शुक्ल जी ने न चाहते हुए भी अखबार जारी रखने को ब्रिटिश प्रशासन से मदद मांगी, लेकिन सफलता नहीं मिली। हिंदी पत्रकारिता दिवस हर वर्ष 30 मई को 'उदंत मार्तंड' के प्रथम प्रकाशन की याद में ही मनाया जाता रहा है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी प्रेस की भूमिका की शुरुआत इसी अखबार से मानी जाती है। यही कारण है कि भारतीय जनसंचार संस्थान ने अपने पुस्तकालय का नाम जुगल किशोर शुक्ल जी के नाम पर ही रखा है। उदंत 'मार्तंड' सिर्फ एक अखबार नहीं, बल्कि हिंदी भाषा और भारतीय पत्रकारिता के इतिहास में एक मील का पत्थर है। यह दिखाता है कि कैसे एक व्यक्ति की मेहनत और दूरदृष्टि ने हिंदी की पत्रकारिता की नींव रख दी। आज हिंदी पत्रकारिता और खासतौर पर मिशनरी पत्रकारिता के सामने अनेक चुनौतियां खड़ी हैं। सत्ता और शक्तिशाली पूंजीपतियों का दबाव हर तरह की पत्रकारिता को जनहित से अलग कर अपनी तरफ मोड़ने पर लगा है। पत्रकारिता के व्यवसायीकरण ने समाचार को प्रोडक्ट बना दिया है। इससे हिंदी पत्रकारिता की जनपक्षधरता, सामाजिक सुधार और प्रगतिशील विचारधारा को धक्का लगा है।

बड़े कारपोरेट घरानों के मीडिया के क्षेत्र में प्रवेश करने से मिशनरी पत्रकारिता तेज़ी से औद्योगिक लाभ कमाने का औजार बन गयी। विज्ञापन समाचारों पर हावी होने लगे। यहां तक कि संपादकीय और विचार वाले पृष्ठ पर छपने वाले लेख भी अखबारों के पूंजीपति मालिक सत्ता को खुश करने और जनविरोधी सामग्री प्रकाशित कर शासन प्रशासन से अपने काम निकालने के लिये प्राथमिकता देने लगे। पाठक को ग्राहक या उपभोक्ता बनाकर ऐसी सामाग्री परोसी जाने लगी जिसमें अश्लीलता, वैचारिक विचलन और सभ्यता और संस्कृति को चुनौती दी जाने लगी। यहां तक होता तो तब भी समायोजित किया जा सकता था लेकिन इसके बाद बात आगे बढ़ती गयी और भटकाव व दिशा परिवर्तन इतना तेज़ होता गया कि प्रतिगामी विचार, ज्योतिष, अंधविश्वास, उपभोक्तावाद को ही जीवनशैली बनाकर पेश किया जाने लगा। इसका नतीजा यह हुआ कि जिस मकसद से हिंदी पत्रकारिता का विचार आया था उसके विपरीत किसानों, मज़दूरों, दलित आदिवासी और समाज के वंचित व शोषित वर्ग की आवाज़ अखबारों से धीरे-धीरे कम होने लगी। सबसे खराब बात यह देखने में आई कि हिंदी अख़बारों ने जाति और धर्म की साम्प्रदायिक राजनीति करने वालों के सामने पूरी तरह से समर्पण कर पाठकों को सही दिशा देने की जगह उल्टा भटकाना शुरू कर दिया। इस मामले में उनको अंग्रेजी अख़बारों ने कई बार आईना दिखाया लेकिन वे नहीं बदले। हिंदी पत्रकारिता बाद में पेड न्यूज और फेक न्यूज का भी शिकार हो गयी। जिससे आज इसका प्रकाशन कम होता जा रहा है। अधिकांश अखबार पीडीएफ कॉपी नेट पर जारी कर अपना वजूद बचाने की कोशिश कर रहे हैं। देखते हैं यह कितनी और कब तक कामयाब होती है। आज जो 'चिंगारी' और 'बिजनौर टाइम्स' जैसे आंचलिक लघु और मध्यम हिंदी अखबार अपना अस्तित्व बचाने के लिये और जनता के अधिकारों, लोकतंत्र, संविधान, कानून के राज, मानवता, समानता, न्याय और देश के गरीब व कमज़ोर लोगों की आवाज़ उठा रहे हैं उनको सम्मानित करने की जगह अक्सर प्रताड़ित किया जाता है। शायर ने आज के संघर्षशील, श्रमजीवी और आम आदमी का दुख दर्द बयान करने वाले हिंदी पत्रकारों के लिये ही शायद यह शेर कहा है-जब भी ज़मीर ओ ज़र्फ़ का सौदा हो दोस्तों, कायम रहो हुसैन के इनकार की तरह।

नोट- लेखक नवभारत टाइम्स डॉटकाम के ब्लॉगर और हिंदी पत्रकारिता व आकाशवाणी से चार दशक से अधिक से जुड़े हैं।

उदंत मार्तंड देश का प्रथम हिंदी भाषा का अखबार था। उदंत मार्तंड का शाब्दिक अर्थ है-'उगता सूर्य'। इस समाचार पत्र के प्रकाशित करने से लेकर इसको निरंतर जारी रखने की कहानी बड़ी रोचक और प्रेरणास्पद है। जहां तक इसके प्रकाशन की तिथि का सवाल है वह तो हम सबको पता ही है वह 30 मई 1826 दिन मंगलवार था। इसके प्रकाशन का उस समय स्थान कलकत्ता यानी ब्रिटिश भारत की राजधानी था। इसके प्रकाशक और संपादक पंडित जुगल किशोर शुक्ल कानपुर मूल के वकील थे। इसके प्रकाशन की अवधि साप्ताहिक हर मंगलवार और लिपि हिंदी देवनागरी थी। इसका पहला अंक 500 प्रतियों के साथ छपा था।

उदन्त मार्तण्ड
बिजनौर टाइम्स
हर कदम पर जनता के साथ
चिंगारी
हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष
मुद्रण से डिजिटल तक
30 मई, 2026

हिन्दी पत्रकारिता एक नज़र में

-प्रो. शशिप्रभा
विभागाध्यक्ष हिन्दी विभाग
वर्धमान कालेज, बिजनौर

हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास पर यदि हम दृष्टिपात करते हैं, तो हमें ज्ञात होता है हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं ने सदा ही जनता जनार्दन का पथ प्रशस्त किया है। आज पत्रकारिता समस्त विश्व का दर्पण बनकर हमारे समक्ष संपूर्ण विश्व की सही तस्वीर प्रस्तुत कर रही है। पत्रकारिता ने मानव के ज्ञान और चैतन्य में वृद्धि की है, मूक विचारों को वाणी दी है और स्वप्नों में रंग भरे हैं। एक साधारण व्यक्ति के सामर्थ्य से बाहर की चीस है कि वह विज्ञान की खोजों और दार्शनिक के ऊंचे विचारों को आसानी से समझ सके, परन्तु पत्रकारिता ने उसे संभव बना दिया है। इसमें गहन से गहन विचारों को साधारण भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। परिणामस्वरूप साहित्य की ऊंची उड़ान, धर्म गुरूओं की दिव्य वाणी, विज्ञान की गहन खोज और प्रयोग को आकाश से उतारकर सर्वसाधारण के लिए धरती पर ला दिया है।

समाज परिवर्तनशील है। इस परिवर्तन की तीव्रता का बनावटीपन अतिभौतिकतावादी विचार और अपसंस्कृति का बढ़ता हुआ संकट समाज में समस्याएं उत्पन्न करने लगा है। अपनी संस्कृति, अपनी विरासत को बचाये रखने का कार्य भी पत्रकारिता को ही करना है। पत्रकारिता अब एक बड़ा उद्योग है और उसे सूचना का व्यवसाय करना आ रहा है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां जब भारत में आती हैं तो वे पहले हिन्दी अख़बारों और हिंदी मीडिया की जानकारी चाहती हैं, क्योंकि माल तो उन्हें हिन्दी क्षेत्र में ही बेचना है। यह सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार है। यूरोप-अमेरिका को मिला दें, तो भी इतना बड़ा बाजार नहीं बनता।

पत्रकारिता पहले मिशन के रूप में थी, अब मैसेज के रूप में है। आज तकनीक ने सूचना का चरित्र ही बदल डाला है, उसे बहुत तीव्र और सार्वभौमिक बना दिया है। जीवन की प्रक्रिया बदलने के साथ-साथ भाषा भी बदलती है। हिन्दी भी बदल रही है। उपभोक्ता क्रांति ग्लोबल बाजार की जरूरतों से जुड़ी है, इसलिए हिन्दी में अंग्रेजी के अनेक शब्द आ गये हैं। प्रिंट मीडिया के कारण ही आज हिन्दी 'ग्लोबल भाषा' है। संचार क्रांति और हिन्दी पत्रकारिता का यह विकास वस्तुतः आज के मानव का ही विकास है। सूचना तंत्र के प्रभाव ने तथा संचार माध्यमों में आयी संचार क्रांति ने पूरे विश्व को एक प्लेटफार्म पर लाकर खड़ा कर दिया है। नई संचार प्रणाली में नये समाज की परिकल्पना है, वो विश्व परिदृश्य को जनमत से जोड़ने की कला भी। आज की पत्रकारिता एक नई चुनौती का सामना कर रही है। इस नई चुनौती के विस्तार में पत्रकारिता भी एक औजार के रूप में प्रयोग हो रही है। यह चुनौती है विज्ञापन के द्वारा बाजार पर निरंतर विस्तृत होती जा रही ताकत का। आज हम समाचार-पत्रों के मुख्य पृष्ठ पर विज्ञापन ही विज्ञापन देखते हैं, तो क्या पत्रकारिता पर प्रश्न चिन्ह नहीं लग जाता? क्या पत्रकारिता अपने मिशन को भूल गयी है?

हिन्दी पत्रकारिता के लिये आज जो सबसे सोचनीय बात है, वह यह है कि पेड न्यूज का जो सिलसिला चुनावी चक्रों के अवसर पर चल पड़ा है, इसने पत्रकारिता की पूरी विश्वसनीयता को ही संदिग्ध बना दिया है। अब तो विज्ञापन और समाचार का भेद ही समाप्त होता जा रहा है। कभी-कभी तो कुछ ख़बरों को पढ़कर ऐसा लगता है जैसे उन्हें किसी भय या लालच के कारण छापा गया हो। लोकतंत्र के जिस चौथे स्तंभ पत्रकारिता को समाज का प्रखर प्रहरी समझा जाता था, आज बाजार में वही अपनी बोली लगवा रहा है।

हिन्दी पत्रकारिता का गौरवशाली इतिहास

हिंदी पत्रकारिता का इतिहास बड़ा ही गौरवशाली है। हिंदी पत्रकारिता ने स्वतंत्रता संग्राम में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 1826 में पं. जुगल किशोर शुक्ल द्वारा निकाले गये हिंदी भाषा के प्रथम समाचार पत्र 'उदंत मार्तंड' ने दमनकारी ब्रिटिश शासन के विरुद्ध जन - जागृति की मजबूत नींव रखी और स्वतंत्रता आंदोलन के मार्ग को प्रशस्त किया। 'उदंत मार्तंड' ईस्ट इंडिया कंपनी की तानाशाही प्रशासनिक नीतियों और स्थानीय जनता पर हो रहे अत्याचारों की जानकारी हिंदी भाषा में आम लोगों तक पहुंचाता था। इस अखबार ने भविष्य के स्वतंत्रता सेनानियों और पत्रकारों को ब्रिटिश शासन के खिलाफ लिखने और आवाज उठाने की प्रेरणा दी। 1867 में भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा संपादित 'कविवचन सुधा' नामक पत्रिका ने स्वदेशी आंदोलन और सामाजिक जागृति को नई धार दी। 1913 में गणेश शंकर विद्यार्थी द्वारा कानपुर से प्रकाशित समाचार पत्र 'प्रताप' भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सबसे साहसी आवाजों में से एक था। इसने आंदोलन में किसानों - मजदूरों के संघर्ष और सरदार भगत सिंह आदि क्रांतिकारियों के विचारों को प्रमुखता से छापा। माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा संपादित समाचार पत्र 'कर्मवीर' ने लोगों में राष्ट्रभक्ति, त्याग और स्वतंत्रता के प्रति असीम जुनून भरने का कार्य किया। 1877 में बालकृष्ण भट्ट द्वारा संपादित पत्रिका 'हिंदी प्रदीप' ने लोगों को राजनीतिक रूप से जागरूक करने और अन्याय के खिलाफ लड़ने की प्रेरणा दी।

1922 में इलाहाबाद (अब प्रयागराज) से प्रकाशित 'चांद' नामक पत्रिका अपनी बेबाकी के लिये जानी जाती थी। इसका 'फांसी' अंक ब्रिटिश सरकार की क्रूरता को उजागर करने के कारण बेहद प्रसिद्ध और प्रतिबंधित हुआ था। अनेक देशभक्तों के लिये प्रेरणा के स्त्रोत बने इस अंक को ब्रिटिश सरकार ने जब्त कर लिया था। पं. मदन मोहन मालवीय द्वारा स्थापित समाचार पत्रों 'हिंदुस्तान' और 'अभ्युदय' ने राष्ट्रवादी विचारधारा के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1907 में इलाहाबाद से प्रकाशित साप्ताहिक अखबार 'स्वराज' ने ब्रिटिश हुकूमत की दमनकारी नीतियों के खिलाफ लगातार लिखा और लोगों में स्वाधीनता प्राप्ति के लिये जोश भरा। हालांकि उस दौर के पत्रकारों को इसके लिये तमाम कष्ट उठाने पड़े। जेल यात्रायें करनी पड़ीं, जुर्माने और जब्ती की कार्यवाही झेलनी पड़ीं तथा उन्हें तरह - तरह से परेशान किया गया।

सामाजिक सुधारों में योगदान

हिंदी पत्रकारिता ने सामाजिक कुरीतियों को मिटाने, रूढ़िवादिता को समाप्त करने तथा सामाजिक सुधारों हेतु जन - जागरुकता फैलाने में ऐतिहासिक और क्रांतिकारी भूमिका निभाई है। राजा राममोहन राय से लेकर अन्य पत्रकारों ने समाचार - पत्रों के माध्यम से सती प्रथा, बाल विवाह एवं छुआछूत जैसी अमानवीय प्रथाओं की कटु आलोचना की और समाज को जागृत किया। समाचार पत्रों, पत्रिकाओं ने तार्किक सोच को बढ़ावा दिया और पाखंड, अंधविश्वास का विरोध कर वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 'बाल बोधिनी' जैसी पत्रिका निकालकर महिलाओं को शिक्षित और जागरूक करने का प्रभावी प्रयास किया। विधवा विवाह के समर्थन और महिला सम्मान को लेकर समाज की मानसिकता बदलने में कारगर भूमिका निभाई। लोगों में स्वदेशी भाषा और संस्कृति के प्रति निष्ठा जगाई। जाति - पाति के बंधनों को तोड़ने, हिंदू - मुस्लिम एकता और सभी वर्गों को एक मंच पर लाने का प्रयास किया। हिंदी को केवल साहित्य तक सीमित न रखकर आम आदमी की भाषा बनाया। हिंदी पत्रकारिता ने हिंदी को जन - जन की भाषा बनाने में सबसे बड़ा योगदान दिया है।

मिशनरी पत्रकारिता आज भी जिंदा है

भले ही आज पत्रकारिता अपने पथ से विचलित हुई है और इसमें भटकाव आया है। लेकिन दिशाहीन पत्रकारिता के बीच आज भी मिशनरी पत्रकारिता जिंदा है। पत्रकारिता का एक हिस्सा भले ही अपने मार्ग से भटका हो, मगर एक भाग आज भी कर्तव्यपथ पर मजबूती से डटा है। हिंदी पत्रकारिता में बिजनौर से प्रकाशित दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' और सांध्य दैनिक 'चिंगारी' तमाम झंझावतों के बीच मिशनरी पत्रकारिता की मशाल को मजबूती के साथ थामे हुए हैं। बिजनौर टाइम्स समूह संसाधनों के अभाव में जिस तरह मिशनरी पत्रकारिता कर रहा है, वह अकल्पनीय और अदभुत ही नहीं है , शोध का विषय भी है। इस समूह के संस्थापक, पत्रकारिता के मनीषी स्व. बाबूसिंह चौहान ने जीवनपर्यंत मिशनरी पत्रकारिता की और वही संस्कार बदल चुके दौर के बावजूद अपने पुत्रों को सौंपे। मिशनरी पत्रकारिता की दुष्कर यात्रा को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी अपने कंधों पर लेकर उसे सार्थक करते श्री चन्द्रमणि रघुवंशी और डा. सूर्यमणि रघुवंशी का संघर्ष शोध का विषय है। बिजनौर टाइम्स और चिंगारी में छपने वाले शब्द और इन समाचार पत्रों से आने वाली गंध इस बात को प्रमाणित करते हैं कि आर्थिक तंगी और आधुनिक संसाधनों की कमी के बावजूद इन्होने सच्ची पत्रकारिता के मिशन को आगे बढ़ाया है।

आधुनिक दौर में भी हिंदी पत्रकारिता पीड़ितों, शोषितों, वंचितों की आवाज बनकर तथा भ्रष्टाचार, अंधविश्वास एवं सामाजिक असमानता के मुद्दों को उजागर करके समाज को सशक्त बनाने की अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन कर रही है। यही एक आवाज है, जो हर वर्ग, हर समाज की पीड़ा को मुद्दा बनाती है और पत्रकारिता में पनपने वाले भ्रष्टाचार को भी उजागर करती है।

-रुकन राजपूत, नांगल सोती

हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्ष पूर्ण होने पर समस्त पत्रकारों एवं मीडियाकर्मियों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं

//23+ years of LEGACY

THE FUTURE WITH
ARTIFICIAL INTELLIGENCE.

Degree Programme

- B.V.Sc & A.H.
- BAMS
- BNYS
- B.Pharmacy
- Post Basic BSc Nursing
- B.Sc. Nursing
- B.P.T.
- B.M.L.S.
- B.Optometry
- B.Sc. Microbiology
- B.Sc. Biotechnology
- B.Sc. Food Technology
- B.Tech (CSE)
- BCA
- B.Sc. (Computer Sc.)
- BBA
- BBE
- B. COM
- BA LL.B
- BBA LL.B (Hons.)
- B.Sc.I B.Sc. Hons (PCM/ZBC)
- B.Sc. Agriculture (Hons.)
- B.Sc. Home Science

Diploma Programme

- Diploma in Agriculture
- Diploma in Veterinary Science
  Live Stock Extension I Veterinary Pharmacy
- Diploma in Pharmacy
- Diploma in Engineering (Polytechnic)
- Diploma in Elementary Education (BTC)
- G.N.M. I A.N.M.

CONTACT US:
7055604050
7055604040

www.vivekuniversity.ac.in

VIVEK UNIVERSITY, BIJNOR
Moradabad Road, Bijnor (U.P.) 246701

क्षेत्रीय पत्रकारिता की भूमिका महत्वपूर्ण रही

-राहुल नील

हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्षों का इतिहास भारतीय समाज की चेतना, संघर्ष और लोकतांत्रिक मूल्यों का इतिहास भी है। 30 मई 1826 को पंडित युगल किशोर शुक्ल द्वारा 'उदंत मार्तंड' के प्रकाशन से प्रारंभ हुई हिंदी पत्रकारिता ने इन दो शताब्दियों में अनेक उतार-चढ़ाव देखे हैं। कभी यह स्वतंत्रता आंदोलन की आवाज बनी, कभी सामाजिक सुधार का माध्यम और आज लोकतंत्र के चौथे स्तंभ के रूप में समाज को दिशा देने का कार्य कर रही है। इस लंबी यात्रा में क्षेत्रीय पत्रकारिता की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है, क्योंकि इसी पत्रकारिता ने गांव, कस्बों और छोटे शहरों की वास्तविक समस्याओं को देश के सामने रखा।

हिंदी पत्रकारिता का स्वर्णिम पक्ष यह रहा कि उसने केवल सत्ता के गलियारों की खबरें नहीं छापीं, बल्कि समाज के अंतिम व्यक्ति की आवाज को भी अभिव्यक्ति दी। राष्ट्रीय स्तर पर 'प्रताप', 'आज', 'कर्मवीर' और 'सरस्वती' जैसे पत्रों ने जनचेतना जगाई, वहीं क्षेत्रीय समाचार पत्रों ने स्थानीय समाज के दुख-दर्द को शब्द दिए। यही कारण है कि हिंदी पत्रकारिता को जनपत्रकारिता भी कहा गया। उत्तर प्रदेश का बिजनौर जिला क्षेत्रीय पत्रकारिता की इसी गौरवशाली परंपरा का महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। यहां से प्रकाशित 'मदीना', 'चिंगारी', 'बिजनौर टाइम्स' जैसे समाचार पत्रों ने निर्भीक पत्रकारिता की मिसाल पेश की। सीमित संसाधनों और कठिन परिस्थितियों के बावजूद इन अखबारों ने जनहित के मुद्दों को प्रमुखता से उठाया। उस दौर में पत्रकारिता केवल व्यवसाय नहीं थी, बल्कि समाज सेवा और जनजागरण का मिशन थी।

'मदीना' अखबार ने बिजनौर और आसपास के क्षेत्रों में सामाजिक चेतना को मजबूत करने का कार्य किया। इस अखबार ने शिक्षा, सामाजिक सौहार्द, किसान समस्याओं और प्रशासनिक अनियमितताओं जैसे मुद्दों को प्रमुखता से प्रकाशित किया। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि यह आम जनता के बीच की पत्रकारिता थी। गांवों और कस्बों की छोटी-छोटी समस्याओं को भी गंभीरता से उठाया जाता था। उस समय जब बड़े मीडिया संस्थान ग्रामीण भारत से दूर थे, तब ऐसे क्षेत्रीय समाचार पत्र जनता की वास्तविक आवाज बने हुए थे।

इसी प्रकार 'चिंगारी' अपने नाम की तरह ही व्यवस्था की विसंगतियों के खिलाफ एक चेतावनी और प्रतिरोध की आवाज थी। इस अखबार ने भ्रष्टाचार, अन्याय और सामाजिक असमानता के विरुद्ध निर्भीक लेखन किया। क्षेत्रीय पत्रकारिता की ताकत यही थी कि वह सत्ता के करीब नहीं, बल्कि समाज के करीब खड़ी रहती थी। छोटे शहरों की पत्रकारिता में आज भी वह आत्मीयता दिखाई देती है, जो बड़े कॉरपोरेट मीडिया में कई बार खो जाती है। बिजनौर की क्षेत्रीय पत्रकारिता ने केवल खबरें नहीं दीं, बल्कि समाज में वैचारिक चेतना भी पैदा की। स्थानीय पत्रकार गांवों में जाकर समस्याओं को समझते थे और जनप्रतिनिधियों तथा प्रशासन को जवाबदेह बनाते थे। यही पत्रकारिता लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत करती है। क्षेत्रीय अखबारों ने किसानों, मजदूरों, शिक्षकों, व्यापारियों और आम नागरिकों के मुद्दों को मंच दिया।

आज जब मीडिया का बड़ा हिस्सा बाजारवाद और टीआरपी की दौड़ में उलझा दिखाई देता है, तब क्षेत्रीय पत्रकारिता की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है। छोटे शहरों और जिलों से निकलने वाले समाचार पत्र आज भी जमीनी सच्चाइयों को सामने लाने का कार्य कर रहे हैं। डिजिटल युग में चुनौतियां अवश्य बढ़ी हैं, लेकिन क्षेत्रीय पत्रकारिता की विश्वसनीयता अब भी उसकी सबसे बड़ी ताकत है। हिंदी पत्रकारिता के 200 वर्षों की यह यात्रा हमें यह समझाती है कि पत्रकारिता का वास्तविक उद्देश्य केवल सूचना देना नहीं, बल्कि समाज को जागरूक और लोकतंत्र को मजबूत बनाना भी है। बिजनौर के 'मदीना' और 'चिंगारी' जैसे अखबार इस गौरवशाली परंपरा के जीवंत उदाहरण हैं, जिन्होंने सीमित संसाधनों में भी निर्भीक और जनपक्षधर पत्रकारिता की मशाल जलाए रखी।

मुद्रण से डिजिटल तक साहित्यिक पत्रकारिता की यात्रा

प्रथम पृष्ठ का शेष

वेब पत्रिकाओं के अस्तित्व में आने से पहले, विशेषकर साहित्य की दुनिया में, प्रिंट पत्रिकाओं का लगभग एकाधिकार था। 'हंस' उनमें सबसे महत्वपूर्ण पत्रिका बनी हुई थी, कुछ हद तक उसके संपादक राजेन्द्र यादव के कारण भी। वेब ने रचनाओं के प्रकाशन का एक वैकल्पिक माध्यम प्रस्तुत किया है। चूंकि यह त्वरित है, इसलिए रचना के प्राप्त होने, प्रकाशित होने और उस पर टिप्पणियां आने में अधिक समय नहीं लगता। संभव है कि किसी वेब पत्रिका के संपादक को कोई रचना पसंद आए और वह उसे प्राप्त होते ही, या अगली सुबह, प्रकाशित कर दे और शाम तक वह पूरे साहित्य-जगत में चर्चित होकर सैकड़ों टिप्पणियों के साथ दिखाई देने लगे। प्रिंट पत्रिकाओं में इन सबके लिए महीनों लग जाते हैं। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि यहां लेखक भी प्रत्यक्ष रूप में उपस्थित होता है और पाठक उससे सीधे संवाद कर सकते हैं। 'हंस' के साथ-साथ लगभग सभी प्रमुख प्रिंट पत्रिकाओं ने अपने को ऑनलाइन भी उपलब्ध कराया है। यह इस बात का प्रमाण है कि डिजिटल माध्यम का महत्व लगातार बढ़ा है। लगभग सभी बड़े लेखक और पाठक सोशल मीडिया पर सक्रिय हैं, इसलिए वेब पत्रिकाएं उन तक आसानी से पहुंच जाती हैं।

एक बात और ध्यान देने योग्य है कि पत्रिकाएं अपने संपादक के कारण भी पहचानी जाती हैं। 'सरस्वती', महावीर प्रसाद द्विवेदी के कारण ही 'सरस्वती' थी। वेब पत्रिकाओं या ऑनलाइन साहित्यिक पत्रिकाओं का प्रकाशन जितना सहज दिखाई देता है, उतना ही दुरूह है उनका संपादन, उनकी स्तरीयता बनाए रखना और उनकी नियमितता कायम रखना। हम भूल जाते हैं कि यह भी अंततः एक पत्रिका ही है। मुद्रित पत्रिका निकालने के लिए एक पूरा स्टाफ होता है-प्रूफरीडर, कॉपी एडिटर, पेज डिज़ाइनर, टाइपिस्ट आदि। जबकि वेब पत्रिका में अक्सर संपादक को ही ये सारे कार्य करने पड़ते हैं; वह एक अर्थ में डाकिया भी है। ज़ाहिर है, यह अत्यंत जटिल और श्रमसाध्य कार्य है। इसी कारण शुरुआती उत्साह जल्दी चूक जाता है।

मुझे लगता है कि इक्कीसवीं सदी अतिवाद की सदी है, और इसका सबसे स्पष्ट रूप हम इंटरनेट पर आसानी से देख और समझ सकते हैं। इक्कीसवीं सदी की पहली चौथाई में जब भारत सहित लगभग पूरी दुनिया बुद्धिविरोधी प्रवृत्तियों, रूढ़-आग्रहों, नियमन और नियंत्रण के दौर से गुजर रही है, 'पोस्ट-ट्रुथ' हमारे विवेक और तर्क को धूमिल कर रहा है, तब 'समालोचन' अपने प्रकाशन के डेढ़ दशक पूरा कर रहा है। एक नए माध्यम में किसी साहित्यिक पत्रिका की अधिकतम संभावना तलाशते हुए, स्वरूप तराशते हुए और कुछ मानक तैयार करते हुए। व्यावसायिक विज्ञापन, सरकारी या कॉर्पोरेट आर्थिक सहयोग के बिना निरंतर 15 वर्षों की इसकी यात्रा समावेशी वैचारिकता और रचना की गुणवत्ता को प्राथमिकता देने के संकल्प के साथ रही है। उसने साहित्य, कला, समाज, इतिहास, दर्शन सबको महत्व दिया है, जिससे कि यह हिंदी समाज की सम्पूर्ण पत्रिका बन सके। जहां 'सरस्वती' ने छापे के युग में भाषा और विवेक का नया युग आरंभ किया था, अनुवाद और साहित्य-इतर विषयों से चित्त का विस्तार किया, वहीं 'समालोचन' ने डिजिटल युग में साहित्यिक विमर्श को गंभीरता, गहराई और लोकतांत्रिक खुलापन प्रदान किया है। स्वाधीनता आन्दोलन में जो आलोचनात्मक दृष्टि अंकुरित हुई थी, वही दृष्टि आज 'समालोचन' में नए संदर्भों, नए विमर्शों और नए माध्यमों के साथ विकसित होती हुई देखी जा सकती है।

सरस्वती का संपादन द्विवेदी जी ने मात्र 15 वर्ष ही किया था। दोनों पत्रिकाओं की यात्राएं भले ही एक सदी के अंतराल से अलग हों, पर उनके उत्स और उद्देश्य में समानता है-हिंदी समाज के बौद्धिक और कलात्मक विकास को वैश्विक स्तर पर ले जाना। पिछले पंद्रह वर्षों में 'समालोचन' ने जो कार्य किया है, वह इस परंपरा की पुर्नस्थापना का विनम्र प्रयास है और एक तरह से उसका नवोन्मेष भी। एक ऐसा मंच, जहां हिंदी साहित्य आत्ममंथन करता है, संवाद रचता है और अपने समय को समझने का साहस दिखाता है। इस अवधि में लगभग 2600 एकल अंक प्रकाशित हुए हैं। लगभग हर दूसरे दिन एक अंक। इसमें पाठकों के बीस हजार पत्र प्रकाशित हैं। समालोचन आज हिन्दी साहित्य का एक जीवंत अभिलेख है। बीते डेढ़ दशक की कविता, आलोचना और अनुवाद की निरंतर डिजिटल स्मृति। आगे भी पत्रिका त्वरित ही नहीं उत्तरदायी भी बनी रहे, यही संकल्प है। इस ख़ास अवसर पर समालोचन अपने तमाम लेखकों और पाठकों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता है और आगे भी सहयोग की आशा रखता है।

कवि-लेखक प्रो. अरुण देव समालोचन के संस्थापक-संपादक हैं। नजीबाबाद में रहते हैं।

हिंदी पत्रकारिता की 200 वर्षों की

गौरवशाली यात्रा पूर्ण होने पर

पत्रकारिता के उद्देश्यों को सार्थक कर रहे, लोकतंत्र के सजग प्रहरियों एवं पीड़ितों की सशक्त आवाज , समस्त सम्मानित पत्रकारों एवं प्रबुद्ध संपादकों को

हार्दिक बधाई एवं शुभकामनायें

तथा विशेषांक प्रकाशित करने पर

बिजनौर टाइम्स ग्रुप के संपादकों

श्री चन्द्रमणि रघुवंशी जी

एवं डा. सूर्यमणि रघुवंशी जी

को हार्दिक बधाई

तपराज सिंह देशवाल

ब्लॉक प्रमुख नजीबाबाद

वरिष्ठ भाजपा नेता एवं प्रबंधक

आरपीएस सीनियर सैकेंड्री पब्लिक स्कूल

व रामपाल सिंह महाविद्यालय, चंदक (बिजनौर)